Legal Express: An International Journal of Law **ISSN 2394-465X**
Vol. VII, Issue-II June 2021

हिन्दू एवं मुस्लिम पारिवारिक विधि का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन

जितेन्द्र सिंह महदौरिया*
डॉ. सुहेल अजीम कुरैशी**

सारांश

हिन्दू विधि के समान ही मुस्लिम विधि भी एक व्यक्तिगत विधि है। व्यक्तिगत विधि क्षेत्रीय विधि से भिन्न होती है। व्यक्तिगत विधि का तात्पर्य है ऐसी विधि जो केवल विशेष समुदाय अथवा सम्प्रदाय के लोगों पर लागू होती है न कि ऐसे सब लोगों पर जो किसी विशेष क्षेत्र में निवास करते हैं।

भारत में अंग्रेजों के शासन काल के पूर्व से ही मुसलमान मुस्लिम विधि से शासित होते थे। सन् 1753 के चार्टर में मुसलमानों की व्यक्तिगत विधि को लागू करने की सुरक्षा प्रदान की गई थी। सन् 1772 में वारेन हेस्टिंग्स ने जो योजना तैयार की थी उसमें यह कहा गया था कि मौलवियों एवं पीडितो को चाहिए कि वे अदालत की कार्यवाही में हिस्सा लें ताकि वे कानून को अच्छे ढंग से समझा सकें एवं न्याय दिलवा सकें। सन् 1773 के रेगूलेटिंग एक्ट के अनुसार उत्तराधिकार, विवाह, जाति एवं अन्य दूसरे धार्मिक मामलों में मुसलमान पर कुरान की विधि एवं हिन्दुओं पर शास्त्रीय विधि लागू होती है।

हिन्दू तथा मुस्लिम अपनी "स्वीय विधि" द्वारा शासित होते हैं। मुसलमान मुस्लिम विधि द्वारा तथा हिन्दू, हिन्दू विधि द्वारा अपनी स्वीय विधि द्वारा शासित होते हैं।

बीजशब्द- हिंदू, मुस्लिम, विवाह, संवैधानिक विधि

प्रस्तावना

मुस्लिम विधि 'अल कुरान' या 'कुरान' पर आधारित है, जिसका अस्तित्व मुसलमान आदिकाल से अल्ला की सत्ता में मानते हैं। इसे मानव के समक्ष प्रस्तुत करने वाले मोहम्मद साहब को 'रसूल अल्लाह' अर्थात् अल्लाह का दूत मानते हैं। "कलामे अल्लाह" (ईश्वर के वचन) धर्म और अध्यात्म के अतिरिक्त कुरान में विधिशास्त्र भी अन्तर्विष्ट है। जो 'शरअ' का मुख्य आधार है। कुरान अल- फुरकान है अर्थात् यह असत्य से सत्य को और अनुचित से उचित को दर्शाता है।[1]

परन्तु जब कभी किसी विषय पर कुरान मौन है तो सुन्नत अथवा "सुन्नाह" (अर्थात, जो कुछ पैगम्बर साहब ने कहा, किया या जिसकी उन्होनें अव्यक्त अनुमति दी थी) और 'हदीस' (अर्थात, पैगम्बर साहब की उक्तियाँ, या कार्यों का वर्णन अथवा अव्यक्त अनुमोदन) से सहायता ली जाती है। मुसलमानों के द्वारा ये सब कुरान के अनुपूरक समझे जाते हैं और उसी कोटि के हैं।[2]

---

* बी.एससी,एम.ए., एल.एलएम, पीजीडीसीए, एम.पी.सेट

** प्राचार्य चौधरी दिलीप सिंह लॉ कॉलेज, भिण्ड; सदस्य, विधि अध्ययन मण्डल, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर

[1] मुस्लिम विधि, अकील अहमद, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी कानूनी पुस्तक, इलाहाबाद पेज नं. 1

[2] मुस्लिम विधि, अकील अहमद, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज, नं.1

हिन्दू विधि की उत्पत्ति

हिन्दू विधि की उत्पत्ति के विषय में दो चरम दृष्टिकोण हैं। सनातनी हिन्दुओं का दृष्टिकोण और यूरोपीय विधिशास्त्रियों का दृष्टिकोण। एक दृष्टिकोण के अनुसार इसकी दैवी उत्पत्ति है। जबकि दूसरा दृष्टिकोण स्मरणातीत प्रथाओं और रिवाजों पर आधारित है। हिन्दुओं के अनुसार हिन्दू विधि की दैवी उत्पत्ति है जो वेदों से प्राप्त हुई है, जो परमेश्वर से प्रकट हुई है। इस सिद्धांत के अनुसार विधि राज्य से स्वतंत्र थी और यह सम्प्रभु तथा उसकी प्रजा पर बाध्यकारी थी। विधि सम्राटों का सम्राट है। यह उनसे अधिक शक्तिशाली और कठोर है। विधि से अधिक शाक्तिशाली कोई नहीं हो सकता जिसकी सहायता से सर्वोच्च सत्ताधारी शासन करता है और उसकी सहायता से निर्बल व्यक्ति बलवान पर विजय प्राप्त करता है। जो व्यक्ति विधि की आज्ञा का पालन नहीं करता है उस पर परमेश्वर प्रसन्न नहीं होगा और वह मृत्यु के पश्चात् परलोक में कष्ट पायेगा।[3]

हिन्दू विधि की प्रयोज्यता

स्वाधीनता के पूर्व हिन्दू विधि को लागू करने की न्यायालयों की शक्ति समय- समय पर ब्रिटिश संसद और प्रांतीय विधानमण्डलों द्वारा पारित अधिनियमों, संविधियों द्वारा प्राप्त की गई थी। अब भारत के संविधान के अनुच्छेद 372 में यह उपबन्ध किया गया है कि सभी विधियाँ (ऐसे अनुकूलनों और संशोधनों के अधीन जैसा कि राष्ट्रपति अनुच्छेद के खण्ड- 2 के अधीन निर्मित करे।) संविधान के आरम्भ (अर्थात् 26 जनवरी, 1950 के आरम्भ) के तत्काल पूर्व भारत में प्रचलित सभी विधियाँ चलती रहेगीं जब तक कि सक्षम विधान मण्डल अथवा अन्य सक्षम अधिकारी द्वारा परिवर्तित अथवा प्रतिस्थापित अथवा संशोधित कर न दी जाऐं।[4]

हिन्दू कौन है?

विदेशी आक्रमणकारियों ने सिन्धु नदी के पूर्व के भू- भाग को 'हिन्दुस्तान' के नाम से तथा यहाँ के निवासियों को हिन्दू के नाम से सम्बोधित किया। वे लोग जो हिन्दू धर्म को मानते हैं, हिन्दू कहलाते हैं। हिन्दू शब्द की परिभाषा करना कठिन है आस्तिक भी हिन्दू होते हैं। नास्तिक तथा मूर्तिपूजक भी हिन्दू होते हैं। मूर्तिपूजा के विरोधी भी हिन्दू होते हैं। जिन व्यक्तियों पर हिन्दू विधि लागू होती है, वे व्यक्ति हिन्दू कहलातें हैं। हिन्दू विधि ऐसे लोगों पर लागू होती है, जो धर्म से हिन्दू हों।
कोई व्यक्ति धर्म से हिन्दू दो प्रकार से होता है:

1. जन्म से हिन्दू
2 धर्म परिवर्तन से हिन्दू

1. **जन्म से हिन्दू-** जो हिन्दू माता- पिता से जन्म लेता है, उसे जन्म से हिन्दू माना जायेगा चाहे वह औरस संतान हो या जारज संतान हो। बौद्ध, सिक्ख या जैन धर्म को मानने वाले व्यक्ति भी जन्म से हिन्दू माने जाते हैं। अत: उससे उत्पन्न सन्तान भी हिन्दू है हिन्दुओं के विभिन्न सम्प्रदाय व पंथ हैं। वे सभी जन्म से हिन्दू हैं। जिनके माता- पिता दोनों हिन्दू धर्म के किसी सम्प्रदाय व पंथ से सम्बधित हों, ऐसी सन्तान भी जन्म से हिन्दू होगी। जिनके माता- पिता में से कोई एक हिन्दू, बौद्ध, जैन या सिक्ख हो तथा उनका पालन पोषण उस रीति से एवं संस्कारों से हुआ हो जिसका माता या पिता सदस्य हो।

[3] हिन्दू विधि, आर. के. अग्रवाल, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज नं. 6

[4] हिन्दू विधि, आर. के. अग्रवाल, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज नं. 8

2 **धर्म परिवर्तन द्वारा हिन्दू-** यदि कोई व्यक्ति जन्म से हिन्दू नहीं है, तो वह धर्म परिवर्तन द्वारा हिन्दू हो सकता है। वे व्यक्ति भी हिन्दू माने जाते हैं जिन्होंने अपना धर्म परिवर्तन कर हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया है या जो पहले हिन्दू थे परन्तु बाद में किसी दूसरे धर्म में चले गये थे लेकिन अब फिर हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया है।[5]

हिन्दू विधि किन- किन पर लागू होती है[6]

हिन्दू विधि निम्नलिखित व्यक्तियों पर लागू होती है-

1. वे व्यक्ति जो धर्मत: हिन्दू, बौद्ध, जैन और सिक्ख हैं।
2. वे व्यक्ति जो हिन्दू, बौद्ध, जैन या सिक्ख माता- पिता की सन्तान हैं।
3. वे व्यक्ति जो मुसलमान, पारसी, या यहूदी नहीं है।
4. अवैध बच्चे जहाँ माता- पिता दोनों हिन्दू हैं।
5. अवैध बच्चे जहाँ पिता ईसाई है और माता हिन्दू है तथा बच्चे का पालन पोषण हिन्दुओं की भांति हुआ है।
6. नायक जाति की एक हिन्दू नर्तकी धर्म परिवर्तन से मुसलमान हो गई उनके पुत्रगण अपने नाना- नानी के पास रहे और उनका पालन- पोषण बतौर हिन्दू हुआ, ऐसे पुत्रगण हिन्दू माने गये।

हिन्दू विधि किन-किन पर लागू नहीं होती हैं[7]

हिन्दू विधि निम्नलिखित पर लागू नहीं होती है-

(i) हिन्दू पिता की अवैध संतानों को जहाँ माता ईसाई है और जिनका पालन- पोषण ईसाई की भाँति हुआ है अथवा हिन्दू पिता की अवैध सन्तान को जहाँ माता मुस्लिम है क्योंकि ये जन्म से अथवा धर्म से हिन्दू नहीं है।

(ii) उन हिन्दुओं को जो ईसाई धर्म में परिवर्तित हो गये हैं, तो ईसाई धर्म में धर्मान्तरित हिन्दू की परिसम्पत्ति का उत्तराधिकार जो निर्वसीयत ईसाई के रूप में मरता है।

(iii) ऐसे धर्मान्तरित व्यक्ति को जिसने हिन्दू धर्म त्यागकर मुस्लिम धर्म अपना लिया है।

हिन्दू विधि के स्रोत

हिन्दू विधि के मुख्य स्रोत निम्नलिखित हैं-

1. **प्राचीन स्रोत**
   (i) श्रुतियाँ
   (ii) स्मृतियाँ
   (iii) भाष्य एवं निबन्ध (टीकायें)

---

[5] हिन्दू विधि, आर. के. अग्रवाल, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज नं. 8

[6] हिन्दू विधि, आर. के. अग्रवाल, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज नं. 9

[7] हिन्दू विधि, आर. के. अग्रवाल, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज नं. 11

(iv) रूढि (प्रथाऐं)

2. **आधुनिक स्रोत**
   (i) न्यायिक निर्णय
   (ii) विधायन
   (iii) न्याय, साम्य व सद्विवेक

मुस्लिम विधि का विकास[8]

मुस्लिम विधि की प्रक्रिया पाँच कालों में विभाजित की जा सकती है और उसकी विवेचना निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत की जा सकती है-

1. कुरान के आदेशों का काल- यह काल हिजरी सन् 1 से 10 (622 ई. से 632 ई.) तक है, सन् 622 ई. से मुस्लिम युग आरम्भ होता है क्योंकि मोहम्मद साहब ने अपने अनुयायियों को इकट्ठा करके मक्का वालो को बदर की लड़ाई 623 ई. से पराजित किया। 622 ई. में मोहम्मद साहब मदीना गये।
2 सुन्ना: काल- यह काल हिजरी सन् 10 से 40 तक है। मोहम्मद साहब के देहावसान के बाद उनके चार उत्तराधिकारियों ने पैगम्बर के समान ही मुस्लिम साम्राज्य का शासन चलाया।
3 सैद्धान्तिक अध्ययन और संग्रह का काल- यह काल सन् 661 ई. से सन् 900 ई. तक जारी रहता है।
4 इज्तिहाद और तकलीफ के विकास का काल- यह काल चारों सुन्नी शाखाओं की स्थापना के समय से प्रारम्भ होता है और 1924 ई. तक जारी रहता है।
5 पंचम काल- यह काल 1924 ई. से वर्तमान समय तक रहा है। 1924 में खलीफा के पद को समाप्त कर दिया गया।

मुस्लिम विधि के स्रोत

मुस्लिम विधि के स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया जाता है-

1. प्रधान स्रोत या प्राथमिक स्रोत या प्राचीन स्रोत
2 गौण स्रोत

1. प्रधान स्रोत
   (i) कुरान
   (ii) सुन्ना या अहदिस
   (iii) इज्मा
   (iv) कयास

2 गौण स्रोत
   (i) रूढि और प्रथाऐं (रिवाज)
   (ii) न्यायिक निर्णय

[8] मुस्लिम विधि, अकील अहमद, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद पेज नं. 7,8

(iii) विधायन

(iv) न्याय, साम्या और सद्धिवेक

शिया शाखा के अनुसार विधि के स्रोत

इसके निम्नलिखित स्रोत हैं-

(i) कुरान

(ii) अहदिस या सुन्ना

(iii) इजमा

इजमा के प्रकार- इजमा के निम्नलिखित प्रकार हैं-

(i) पैगम्बर के साथियों का इजमा

(ii) विधिवेत्ताओं का इजमा

(iii) जनता का इजमा

मुस्लिम विधि और मूल हिन्दू विधि के स्रोतों की तुलना[9]

1. यह ध्यान देने योग्य है कि मूल हिन्दू विधि भी विधि के चार स्रोतों को मान्यता देती थी।

(i) श्रुति

(ii) स्मृतियाँ

(iii) भाष्य एवं निबन्ध (टीकायें)

(iv) रूढि (प्रथाऐं)

मुस्लिम विधि के प्रधान स्रोत और हिन्दू विधि के प्रधान स्रोत भिन्न- भिन्न हैं जबकि मुस्लिम विधि के गौण स्रोत और हिन्दू विधि के आधुनिक स्रोत एक समान हैं।

2. हिन्दू और मुस्लिम विधियाँ दोनों ही दैवी उद्गम का दावा करती हैं और शासक को विधि के अधीन मानती हैं, विधि के ऊपर नहीं हैं। दोनों ही विधि व्यवस्थाओं के अन्तर्गत शासक कार्य विधि का निर्माण करना नहीं, वल्कि विधि के अनुसार शासन संचालित करना मात्र है।
3. दोनों ही पद्धतियों में, प्रथम स्रोत हिन्दू विधि में श्रुति (वेद) और मुस्लिम पद्धति के अन्तर्गत कुरान को ईश्वरी वाणी माना जाता है।
4. दोनों में प्रमुख भेद यह है कि मुस्लिम विधि एक ऐतिहासिक विशिष्ट पुरूष अर्थात पैगम्बर मोहम्मद को अपना व्यवस्थापक मानती है, पर हिन्दू विधि ऐसा कोई दावा नहीं करती।

[9] मुस्लिम विधि, अकील अहमद, प्रकाशक- सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद पेज नं. 17

हिन्दू विधि और मुस्लिम विधि का तुलनात्मक अध्ययन

(1) मुस्लिम विधि में विवाह को निकाह कहा जाता है। निकाह (विवाह) का अर्थ है स्त्री और पुरूष का यौन-संयोग और विधि में इनका अर्थ विवाह है। कुछ विधिशास्त्रियों के अनुसार मुस्लिम विवाह एक सिविल संविदा है, कुछ विधिशास्त्रियों ने इसे एक धार्मिक संस्कार कहा है। इसलिए मुस्लिम विवाह एक सिविल संविदा और धार्मिक संस्कार दोनों है। मुस्लिम विवाह एक सिविल संविदा है इसलिए वह हिन्दू विवाह से भिन्न होता है। हिन्दू विधि में विवाह एक संस्कार माना जाता है। हिन्दू विधि के अनुसार स्त्री पति की अर्द्धांगिनी समझी जाती है। हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा- 7 यह उपबन्ध करती है कि विवाह यदि सप्तपदी प्रथा के अन्तर्गत होता है तो विवाह तब तक पूर्ण नहीं माना जायेगा जब तब कि पवित्र अग्नि के समक्ष सप्तपदी लगाने की औपचारिकता पूरी न हो जाये। प्राचीन हिन्दू विधि में विवाह एक संस्कार है।

(2) मुस्लिम विधि के अन्तर्गत विवाह- विच्छेद (तलाक) और पारस्परिक सहमति द्वारा तलाक (खुला), इला, जिहार, मुवारत द्वारा हो सकता है।

सुन्नी विधि के अन्तर्गत तलाक मौखिक या लिखित कैसा भी हो सकता है और दो साक्षियों की उपस्थिति में दिया जाना जरूरी है। लिखित तलाक केवल तभी दिया जा सकता है, जबकि पति मौखिक रूप से तलाक देने में असमर्थ हो। जबकि हिन्दू विधि के अन्तर्गत तलाक हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा- 13 और धारा- 13 बी के तहत लिया जाता है।

प्राचीन हिन्दू विवाह पति और पत्नी के बीच एक ऐसा सम्बन्ध स्थापित करता था जिसे तोड़ा नहीं जा सकता था। परन्तु अब हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा- 13 के कुछ आधारों पर पति और पत्नी दोनों को विवाह विच्छेद का अधिकार दे दिया है। मुस्लिम विधि के अन्तर्गत विवाह मृत्यु अथवा विवाह विच्छेद से समाप्त हो जाता है।

(3) मुस्लिम विधि के अन्तर्गत पति एक साथ चार पत्नियाँ रख सकता है। इस्लाम धर्म के अनुसार मुस्लिम व्यक्ति एक साथ चार पत्नियाँ रख सकता है। जबकि प्रचीन हिन्दू विधि के अन्तर्गत एक हिन्दू एक से अधिक पत्नियाँ रख सकता था। उसके द्वारा पत्नियों के रखने की संख्या पर कोई कानूनी प्रतिबन्ध नहीं था। परन्तु हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा- 5 का निषेध करती है। हिन्दुओं में विवाह रूढिगत रीतियों और कर्मकाण्ड के अनुसार अनुष्ठापित किया जाता है। हिन्दुओं में पति एक साथ एक ही पत्नी रखना मान्य है। हिन्दुओं में यदि कोई पति एक से अधिक पत्नी रखता है तो वह भारतीय दण्ड संहिता और हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अन्तर्गत दण्ड का दायी होगा।

(4) मुस्लिम विधि के अनुसार कोई स्त्री विवाह द्वारा अपने अस्तित्व को पति के अस्तित्व में नहीं मिला देती। वह विवाह के बाद भी अपनी अलग विधिक स्थिति बनाये रखती है। हिन्दू विधि के अन्तर्गत, विवाह के पश्चात् पत्नी का गोत्र परिवर्तित हो जाता है और वह पिता के गोत्र से पति के गोत्र में परिवर्तित हो जाती है।

(5) मुस्लिम विधि के अन्तर्गत स्त्री के विवाह के पश्चात् पति की मृत्यु या तलाक द्वारा विवाह- विच्छेद हो गया हो, तो उसे एकान्त में रहना और दूसरे पुरूष से विवाह न करना अनिवार्य है। इस निश्चित समय को इद्दत कहा जाता है। जबकि हिन्दू विधि के अन्तर्गत पत्नी को पति की मृत्यु या तलाक द्वारा विवाह विच्छेद के पश्चात् इद्दत जैसी कोई अवधि व्यतीत नहीं करनी होती है।

(6) मुस्लिम विधि में प्रत्यायोजित तलाक (तलाक-ई-ताफवी)- कोई पति या तो स्वयं अपनी पत्नी को तलाक दे सकता है या तलाक देने की अपनी शाक्ति का प्रत्यायोजन किसी तीसरे पक्ष को या स्वत: अपने को ही कर सकता है। जबकि हिन्दू विधि में प्रत्यायोजित तलाक जैसा कोई प्रावधान नहीं हैं। हिन्दू विधि में तलाक पति या

पत्नी द्वारा ही लिया जाता है और वह भारतीय कानून हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अनुसार ही लिया जाता है।

(7) मुस्लिम विधि में केवल पत्नी और अवयस्क सन्तान को छोड़कर कोई अन्य सम्बन्धी, जो सम्पन्न हो भरण-पोषण का अधिकारी नहीं होता। परन्तु प्रत्येक मुसलमान अपने पूर्वजों और वंशजों के लिए भरणपोषण का प्रबंध करने के लिए बाध्य है और उनसे भरणपोषण प्राप्त करने का अधिकारी है। मुस्लिम विधि के अनुसार केवल वे ही लोग भरणपोषण के अधिकारी हैं जो दरिद्र और निर्धन हैं तथा अपनी जीविका उपार्जन करने में असमर्थ हैं। जबकि हिन्दू पत्नी अपने पति से भरणपोषण हिन्दू दत्तक ग्रहण तथा भरण- पोषण अधिनियम, 1956 के तहत प्राप्त कर सकती है।

(8) मुस्लिम विधि के अनुसार एक मुसलमान अपने जीवनकाल में अपनी सम्पत्ति का विधिपूर्ण ढंग से दान (हिवा) कर सकता है या वह अपनी सम्पत्ति को वसीयत द्वारा, जो उसकी मृत्यु के बाद प्रभावी होगी अन्तरित कर सकता है और इस सम्बन्ध में उसके ऊपर मुस्लिम विधि द्वारा कोई प्रतिबन्ध नहीं है। लेकिन वसीयत में कोई भी वसीयतकर्ता कुल सम्पत्ति का 1/3 (कुल सम्पत्ति का एक तिहाई) से अधिक की वसीयत नहीं कर सकता। किन्तु कुछ परिस्थितियों में समस्त वारिसान की सहमति के आधार पर समस्त सम्पत्ति की वसीयत की जा सकती है। जबकि दान (हिबा) समस्त सम्पत्ति का किसी को भी किया जा सकता है। इसी प्रकार एक हिन्दू भी अपनी सम्पत्ति का विधिपूर्ण ढंग से दान कर सकता है या वह अपनी सम्पत्ति को वसीयत द्वारा अन्तरित कर सकता है जो उसकी मृत्यु के बाद प्रभावी होगी। हिन्दू विधि और मुस्लिम विधि में दान समान है। दान चल और अचल दोनों सम्पित्तियों का हो सकता है।

मुस्लिम विधि और हिन्दू विधि में वसीयत एक समान प्रकार से होती है और वसीयत, वसीयतकर्ता की मृत्यु हो जाने पर प्रभावी होती है।

(9) मुस्लिम विधि में दत्तकग्रहण का कोई प्रावधान नहीं है जबकि हिन्दू विधि में दत्तकग्रहण हो सकता है। हिन्दुओं में दत्तकग्रहण हिन्दू दत्तक ग्रहण तथा भरण- पोषण अधिनियम, 1956 के तहत लिया जाता है।

(10) इस्लाम के आने के पहले विवाह के समय पत्नी का पिता मेहर की धनराशि प्राप्त करता था। विवाह के बाद पत्नी पति की सम्पति मानी जाती थी। मेहर वह धनराशि अथवा सम्पति है जो पति द्वारा पत्नी को विवाह के प्रतिफल के रूप में दिया जाता है अथवा देने का वचन दिया जाता है, जबकि हिन्दू विधि में विवाह के समय पति द्वारा पत्नी को मेहर जैसा कुछ नहीं दिया जाता है।

बेली के अनुसार विवाह की परिभाषा- स्त्री- पुरूष के समागम को बैध बनाने और सन्तान उत्पन्न करने के प्रयोजन के लिए संविदा के रूप में की गई है।

हेदाया के अनुसार- विवाह एक विधिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा स्त्री और पुरूष के बीच समागम और बच्चों की उत्पत्ती तथा औरसीकरण पूर्णतया वैध और मान्य होते हैं।

असहावा के अनुसार- विवाह स्त्री और पुरूष की ओर से पारस्परिक अनुमति पर आधारित स्थाई सम्बन्ध में अन्तर्निहित संविदा है।

डॉ. मोहम्मद उल्लाह एस जंग के अनुसार- विवाह सारत: एक संविदा होते हुए भी एक श्रद्धात्मक कार्य है। जिनके उद्देश्य हैं उपभोग और सन्तानोत्पत्ति के अधिकार और समाज के हित में सामाजिक जीवन का नियमन।

अब्दुर्रहीम के अनुसार- विवाह की प्रथा में इबादत (धार्मिक कृत्य) मुआमलात (व्यावहारिक कृत्य) दोनों गुण पाये जाते हैं अर्थात् मुस्लिम रिवाजों के अन्तर्गत विवाह सारत: एक व्यावहारिक संविदा होते हुए भी श्रदात्मक कार्य है। अर्थात् मुस्लिम विधि में विवाह एक सिविल संविदा और धार्मिक संस्कार दोनों है।

हिन्दू विधि में भी विवाह का अर्थ स्त्री- पुरूष का पारस्परिक यौन संयोग (सन्तानोत्पत्ति) करना है अर्थात वंश की वृद्धि करना है। हिन्दू विधि मे विवाह एक संस्कार है।

मुस्लिम विधि में विवाह की आवश्यक शर्ते

(i) **प्रस्ताव (इजब) और स्वीकृति (कबूल)-** अन्य संविदाओं के समान विवाह भी प्रस्ताव (इजब) एवं स्वीकृति से पूर्ण होता है यह आवश्यक है कि विवाह का एक पक्षकार दूसरे पक्षकार से विवाह करने का प्रस्ताव करे जब दूसरा पक्षकार प्रस्ताव की स्वीकृति दे देता है तभी विवाह पूर्ण होता है।

(ii) **सक्षम पक्षकार-** विवाह करने के लिए पति तथा पत्नी को सक्षम होना चाहिए, विवाह के दोनों पक्षकारों में संविदा करने की क्षमता होना जरूरी है अर्थात उन्हें विवाह के लिए सक्षम होना आवश्यक है। जो कि इस प्रकार है सामान्य नियम यह है कि विवाह के पक्षकार मुस्लिम विधि के अनुसार वयस्क हों। मुस्लिम विधि के अनुसार वयस्कता की आयु 15 वर्ष मानी गई है। अर्थात् यौवनावस्था का तात्पर्य है कि लड़का सन्तान उत्पन्न करने योग्य हो जाता है और लड़की सन्तान धारण करने योग्य हो जाती है। जबकि हिन्दुओं के लिए शादी की आयु यदि लड़का है तो 21 वर्ष और यदि लड़की है तो 18 वर्ष की आयु पूर्ण कर ली हो।

(iii) दोनों पक्षकारों अथवा उनके अभिभावकों की स्वतंत्र रहमति।

(iv) दोनों पक्षकारों के बीच निषिद्ध सम्बन्ध के अभाव होना।

(v) **विधिक अनर्हता का अभाव-** वयस्कता विवेक और स्वतंत्र सहमति के अतिरिक्त विवाह की योग्यता की एक शर्त यह है कि संयोग में कोई विधिक अनर्हता और बाधा न हो। विधिक अनर्हता से तात्पर्य यह है कि पक्षकार निषिद्ध आसत्तियों के भीतर या परस्पर इस प्रकार सम्बन्धित न हों, जो विवाह को अबैध बना दे। ये निषेध चार प्रकार के होते हैं-

1. निरपेक्ष असमर्थता
2. सापेक्ष असमर्थता
3. निषेधात्मक असमर्थता
4. निदेशात्मक असमर्थता

(1) **पूर्ण असमर्थता-** विवाह करने की पूर्ण असमर्थता तीन प्रकार से होती है-

(i) रक्त सम्बन्ध

(ii) विवाह सम्बन्ध

(iii) धात्रेय सम्बन्ध (दूध से सम्बन्ध)

(i) **रक्त सम्बन्ध या कराबत**- कुछ सम्बन्ध ऐसे होते हैं जिनसे परस्पर सम्बन्धित स्त्री- पुरूषों में एक दूसरे से विवाह नहीं किया जा सकता, जैसे कोई पुरूष निम्नलिखित महिलाओं से विवाह नहीं कर सकता।

1. अपनी माता या दादी, चाहे जितनी पीढ़ी ऊपर हो।
2. अपनी पुत्री या पौत्री, चाहे जितनी पीढ़ी नीचे हो।
3. अपनी बहिन, चाहे सगी हो या सहोदर हो या एकोदर हो।
4. भाई की पुत्री या पौत्री, चाहे जितनी पीढ़ी नीचे हो,
5. अपनी या अपने पिता या माता की बहन (मौसी या मामी) तथा दादा- दादी की बहिने, चाहे जितनी पीढ़ी ऊपर हो, रक्त सम्बन्ध के कारण निषद्ध स्त्री से विवाह शून्य होता है।

(ii) विवाह सम्बन्ध या मुशारत- इसके अन्तर्गत निम्न लोग आते हैं।

1. पत्नी की माता या दादी, चाहे जितनी पीढ़ी ऊपर हो।

2. पत्नी की पुत्री या पौत्री, चाहे जिनती पीढ़ी नीचे हो।
3. पिता या पितामाह की पत्नी, चाहे जितनी पीढ़ी नीचे हो।
4. पुत्र, पौत्र या दौहित्र (नाती) की पत्नी, चाहे जितनी पीढ़ी नीचे हो।
5. विवाह सम्बन्ध के कारण निषिद्ध स्त्री से विवाह शून्य होता है।

(iii) धात्रेय सम्बन्ध (दूध के सम्बन्ध) या रिजा- जबकि 2 वर्ष से कम आयु के किसी शिशु ने अपनी माँ के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री का दूध पिया है तो उस शिशु और उस स्त्री के बीच धात्रेय सम्बन्ध उत्पन्न हो जाता है और वह स्त्री उस शिशु की धाय माँ मानी जाती है। धात्रेय सम्बन्ध बे होते है जिन्होने एक ही स्त्री का दूध पिया हो।

शिया विधि- शिया विधि के अन्तर्गत धात्रेय सम्बन्धियों के साथ विवाह पूर्णत: निषिद्ध है। रक्त सम्बन्धी , विवाह सम्बन्धी और धात्रेय सम्बन्ध के आधार पर विवाह शून्य होता है।

2. **सापेक्ष असमर्थता-** सापेक्ष असमर्थता का उद्भव ऐसे कारणों से होता है। जो विवाह को केवल उसी समय तक अमान्य बनाते हैं। जब तक कि अवरोध उत्पन्न करने वाले कारणों का अस्तित्व कारण के दूर होते ही असमर्थता दूर हो जाती है। जैसे- एक समय में चार से अधिक पत्नियों से विवाह निषिद्ध है।

सापेक्ष असमर्थता के दृष्टांत-

(i) अवैध संयोग

(ii) बहुविवाह अर्थात् पाँचवी स्त्री से विवाह

(iii) उचित साक्षियों की अनुस्थिति

(iv) धर्म में भिन्नता

(v) इद्दत की अवधि बिताती हुई स्त्री

मुस्लिम विधि को दो शाखाओं में विभाजित किया गया है

(i) सुन्नी विधि
(ii) शिया विधि

शिया लोगों में अस्थाई विवाह वैध होता है, परन्तु सुन्नियों में अस्थाई विवाह अवैध होता है। सुन्नी विधि विवाह के समय दो पुरूष साक्षियों की उपस्थिति विहित करती है। परन्तु शिया विधि में साक्षियों की आवश्यकता नहीं होती है। हिन्दू विधि में अस्थाई विवाह नहीं होता है।

हिन्दू विधि में विवाह की शर्ते

(1) विवाह के दोनों पक्षों को हिन्दू होना आवश्यक था कोई हिन्दू किसी अन्य धर्माबलम्बी के साथ विवाह नहीं कर सकता था।

(2) वर एवं वधू को समान वर्ण का होना आवश्यक था, हिन्दू चार वर्णो में विभक्त था।

(i) ब्राह्मण

(ii) क्षत्रिय

(iii) वैश्य

(iv) शूद्र

(3) वर एवं वधू को भिन्न- भिन्न गोत्र एवं प्रवर का होना आवश्यक था।

(4) विवाह के पक्षकारों को सपिण्ड सम्बन्ध के अन्तर्गत सम्बंधित न होना आवश्यक था।

(5) हिन्दू पुरूष एक से अधिक स्त्रियों से विवाह कर सकता था, किन्तु स्त्री मात्र एक पुरूष से ही विवाह कर सकती थी। विधवा विवाह वर्जित था। लेकिन आज पुरूष एक ही पत्नी रख सकता है और विधवा पुर्नविवाह कर सकती है।

विवाह की रीतियाँ

मनु ने विवाह की 8 रीतियों का उल्लेख किया है जिनमें से चार मान्य है तथा शेष चार अमान्य हैं।

मान्य विवाह

(i) ब्रह्म विवाह- जब कन्या का पिता वेद पढे हुए सदाचारी वर को स्वयं बुलाकर उसकी पूजा कर और उसे वस्त्रादि से अलंकृत कर उसे कन्यादान करता है, तो ऐसे विवाह को ब्रह्म विवाह कहा जाता है।

(ii) दैव विवाह- जब यज्ञ में विधिपूर्वक कर्म करते हुए कन्या को अलंकृत करके उसे वर को दान में दिया जाता है तो इसे दैव विवाह कहा जाता है।

(iii) आर्य विवाह- धर्म कार्य के लिए गो- मिथुन वर से दान में लेकर विधिपूर्वक कन्यादान करने को आर्य विवाह कहते हैं।

(iv) प्रजापत्य- वर एवं कन्या दोनों साथ में धर्माचरण करें ऐसा कह उनकी पूजा करके कन्यादान करने को प्रतापत्य विवाह कहते हैं।

अमान्य विवाह

(v) असुर विवाह- कन्या के लिए यथाशक्ति धन देकर जब स्वेच्छा से वर उसे स्वीकार करे तो इसे असुर विवाह कहा जाता है।

(vi) गान्धर्व विवाह- जब वर एवं कन्या स्वेच्छा से एवं सम्भोग व मैथुन के वशीभूत होकर विवाह करते हैं तो ऐसे विवाह को गान्धर्व विवाह कहते हैं।

(vii) राक्षस विवाह- कन्या के पक्ष वालों को मारकर, उनका अंगच्छेदन कर, उनके घर एवं द्वार को तोड़कर सहायता के लिए पुकारती हुई एवं रोती हुई कन्या का बलपूर्वक अपहरण करने को राक्षस विवाह कहते हैं।

(viii) पैशाच विवाह- रोती हुई मद से मत्त विकृत मस्तिष्क की कन्या के साथ सम्भोग करके विवाह करने को पैशाच विवाह कहते हैं।

संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान में प्रावधान किया गया है कि नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता अर्थात राज्य भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का प्रयास करेगा।

लेकिन अभी तक भारत में एक समान सिविल संहिता लागू नहीं की जा सकी है अर्थात् मुस्लिमों के लिए मुस्लिम विधि और हिन्दुओं के लिए हिन्दू विधि लागू है।[10]

विवाह कायम रहने के दौरान- मुस्लिम विधि में पति अपनी पत्नी का भरण- पोषण करने के लिए बाध्य है, पति का पत्नी को भरण- पोषण प्रदान करने का दायित्व उस समय प्रारम्भ होता है जबकि पत्नी यौवनावस्था को प्राप्त हो जाती है, इसके पहले नहीं। पत्नी पति से भरण- पोषण पाने की अधिकारिणी है। भले की वह सम्पन्न हो और पति गरीब। पत्नी चाहे मुस्लिम हो या गैर मुस्लिम, गरीब हो या अमीर, स्वस्थ हो या रोगी, युवा हो या वृद्ध वह सभी अवस्थाओं में अपने पति से भरण- पोषण प्राप्त करने की हकदार है। पति उसे भरण- पोषण का करार न होने पर भी भरण- पोषण प्रदान करने के लिए बाध्य है। इस स्थिति में उसका भरण- पोषण का अधिकार निरपेक्ष है। यदि पत्नी के पास निजी सम्पति या आमदनी हो तो भी उसका अधिकार ज्यों का त्यों बना रहता है। हिन्दू विधि में पति अपनी पत्नी का भरण- पोषण हिन्दू दत्तक ग्रहण तथा भरणपोषण अधिनियम, 1956 के तहत प्राप्त करने की अधिकारिणी हैं।

निम्नलिखित परिस्थितियों में पति अपनी पत्नी का भरण- पोषण करने के लिए बाध्य है-

1. उसने यौवनावस्था प्राप्त कर ली है अर्थात् ऐसी अवस्था जिसमें वह अपने पति के दाम्पत्य अधिकारों को पूरा कर सकती है।
2. वह अपने को उसके अधिकारों में समर्पित कर देती है या कर देने को प्रस्तुत है जिसमें कि पति हर वैध समय पर उसके पास बेरोक-टोक पहुँच सके और वह उसकी सब बैध आज्ञाओं का पालन करती है।
3. मुस्लिम विधि के अन्तर्गत, पति तभी पत्नी का भरण- पोषण करने के लिए बाध्य होगा जबकि विवाह मान्य हो। यदि विवाह अनियमित या शून्य है तो पत्नी भरण- पोषण नहीं पा सकती। शिया विधि के अन्तर्गत मुता विवाह की पत्नी भरण- पोषण नहीं पा सकती।

पत्नी निम्नलिखित परिस्थितियों में भरण- पोषण की अधिकारिणी नहीं होती है-

1. यदि वह दाम्पत्य अधिवास को बिना मान्य कारण के त्याग देती है।
2. यदि वह पति को अपने पास नहीं आने देती है।
3. यदि वह उसकी युक्तिसंगत आज्ञाओं का पालन नहीं करती है।
4. यदि वह किसी वैध कारण के बिना पति से साथ रहने से इन्कार करती है।
5. यदि उसे कारावास हो गया है।
6. यदि वह किसी के साथ भाग गई है।
7. यदि वह अवयस्क है, जिसकी बजह से विवाह से विवाह पूर्णावस्था को नहीं प्राप्त हो सकता है।
8. यदि वह स्वेच्छा से पति को छोड़ जाती है और अपने दाम्पत्य कार्तव्य का पालन नहीं करती है।
9. यदि पति के द्वारा दूसरा विवाह कर लेने पर उसे त्याग देने का समझौता कर लेती है।

[10] अनुच्छेद 44 भारत का संविधान, प्रकाशक – पूजा लॉ हाउस खेत्रपाल लॉ पब्लिकेशन्स 27 एम. जी. रोड़, रामपुरावाला बिल्डिंग, इन्दौर – 452007 (म. प्र.)

मुस्लिम विधि से सम्बन्धित कानून

1. मुस्लिम विवाह- विच्छेद अधिनियम, 1939
2. मुस्लिम स्त्री (विवाह- विच्छेद पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986
3. मुस्लिम स्वीय विधि (शरीयत) अधिनियम, 1937
4. काजी अधिनियम, 1880

हिन्दू विधि से सम्बन्धित कानून

1. जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम, 1850 (धार्मिकता स्वतंत्रता अधिनियम) कोई भी व्यक्ति जो अपने धर्म को त्याग करता है अथवा अपनी जाति खो देता है वह अधिनियम के अन्तर्गत दाय के अपने अधिकारों से वंचित नहीं होता है।
2. हिन्दू विधवाओं का पुनर्विवाह अधिनियम, 1956
3. भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875
4. हिन्दू सम्पति व्ययन अधिनियम, 1916
5. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925
6. दाय निर्योग्यता निवारण अधिनियम, 1850
7. विशेष विवाह अधिनियम,1954
8. बाल विवाह अवरोधक (संशोधन) अधिनियम, 1978
9. हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955
10. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956
11. हिन्दू दत्तक ग्रहण एवं भरण पोषण अधिनियाम, 1956

महत्वपूर्ण न्यायदृष्टांत

अब्दुल कादिर बनाम सलीमा[11] के वाद में न्यायाधीश महमूद कहते है कि "मुस्लिम विवाह शुद्ध रूप से एक संविदा है न कि संस्कार" मेहर मुस्लिम विधि में वह धन राशि या सम्पत्ति होती है जिसे पति विवाह के प्रतिकर के रूप में पत्नी को देने का वादा करता है तथा यदि विवाह के समय इसे नियत न किया जाये या इसका जिक्र न किया जाये तो भी कानून पत्नी को मेहर का हकदार प्रदान करता है।

अब्दुल कादिर बनाम सलिमन[12] के वाद में न्यायाधीश महमूद और न्यायाधीश मित्तर ने सबरून्निशा के वाद में मुस्लिम विवाह को संविदात्मक दायित्व के रूप में बल दिया है और मुस्लिम संविदा को विक्रय संविदा के समान बताया है।

मैना बीबी बनाम चौधरी वकील अहमद[13] प्रिवीकौसिल के मामले में निर्णय दिया गया कि कोई विधवा अदत मेहर के बदले पति की सम्पत्तियों पर कब्जा बनाये रखती है। सम्पत्तियों की स्वामिनी नहीं होती उसे केवल

---

[11] आई. एल. आर. (1886) 8 इला. 149

[12] (1846) 8 इला. 149

इतना अधिकार रहता है कि जब तक अदत्त मेहर का भुगतान उत्तराधिकारियों द्वारा न हो जाये तब तक वह कब्जा बनायें रखे। वह सम्पत्तियों की स्वामिनी नहीं बन जाती है उसे सम्पत्तियों के हस्तान्तरण का अधिकार भी नहीं मिलता है।

कपूर चन्द्र बनाम खदरून्निजा[14] के मामले में कहा गया कि मुस्लिम विधवा अपने मृत पति की सम्पत्ति पर कब्जा रख सकती है, परन्तु विधवा का अन्य अप्रतिभूत ऋणदाताओं की अपेक्षा प्राथमिकता का अधिकार नहीं होता है। विधवा पति की सम्पत्ति में उत्तराधिकारिणी भी है, इस कारण मेहर की अदायगी में उसे भी अंशदान करना पढ़ता है। मेहर ऋण की अदायगी में प्रत्येक उत्तराधिकारी अन्य ऋणों की भाँति मृतक से प्राप्त होने वाली सम्पत्ति के अनुपात में ही अपना योगदान करेगा।

मोहम्मद सादिक बनाम फख्र[15] जहाँ इस वाद में एक स्त्री का मेहर 50,000/- रूपये का था पति की जिन्दगी में उसने पति से इतना धन प्राप्त कर लिया था कि उसका योग तय किये गये मेहर से अधिक होता था। सबसे अधिक धनराशि जो उसने एक बार में प्राप्त की 3000/- रूपयें की थी यह प्रमाणित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं था कि पति ने ये धन राशियाँ मेहर ऋण के भुगतान में दी थी। अत: इन धनराशियों को मेहर माना गया।

फरजन्द हुसैन बनाम खानू बीबी[16] इस वाद में तलाक पारिवारिक वकील के सामने दिया गया था और पत्नी को नामंकित नहीं किया गया था कलकत्ता उच्च न्यायालय ने इस तलाक को अवैध घोषित किया।

दिलशाद मासूद बनाम गुलाम मुस्तफा[17] इस मामले में जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि शिया विधि के अन्तर्गत तलाक केवल अरबी भाषा में ही होना चाहिए और एक निश्चित प्रारूप में होना चाहिए यह आवश्यक नहीं है कि पति अरबी भाषा का ज्ञानकार हो। वह किसी ऐसे प्रतिनिधि को इस प्रयोजन के लिए नियुक्त कर सकता है जो उसकी तरफ से अरबी भाषा में तलाक का उच्चारण कर सकता है परन्तु अरबी भाषा का ज्ञाता व्यक्ति उपलब्ध नहीं है तो किसी अन्य भाषा में तलाक का उच्चारण किया जा सकता है।

रशीद अहमद बनाम अनीसा खातून[18] इस मामले में गयासुद्दीन ने इन शब्दों को मैं अनीसा खातून को हमेशा के लिए तलाक देता हूँ और अपने लिए हराम बनाता हूँ। साक्षियों की उपस्थिति में तथा पत्नी की अनुपस्थिति में तीन बार दोहराया था। जिसमें विवाह- विच्छेद का आशय स्पष्ट था और चार दिन बाद तलाकनामे द्वारा उसकी पुष्टि की गई थी। अत: यह निर्णीत किया गया कि तलाक मान्य था और उसके बाद 5 बच्चे हुऐ जिनकी बैधता को पिता ने स्वीकार किया। यह साबित नहीं किया कि पक्षकारों में पुनर्विवाह अर्थात् पत्नी के अन्य पुरूष से विवाह फिर तलाक तथा फिर पूर्व पति से विवाह हुआ था।

बफातन बीबी बनाम शेख मेमुना बीबी[19] इस मामले मे पति- पत्नी के बीच करार किया गया कि यदि उनके बीच असहमति होती है तो पत्नी को अलग रहने का अधिकार होगा और पति भरण- पोषण प्रदान करने के लिए बाध्य होगा। यदि पति अपनी पत्नी को भरण- पोषण प्रदान करने में असमर्थ होता है तो पत्नी विवाह- विच्छेद करने की हकदार होगी इस प्रकार का करार सावर्जनिक नीति के विरूद्ध नहीं था।

---

[13] (1924) 52 आई. ए. 145

[14] (1950) एस. सी. आर. 74.

[15] (1931) 59 आई.19.

[16] (1878) 4 कल. 588.

[17] ए. आई. आर. (1986) जम्मू और काश्मीर 80.

[18] (1932) 59 आई. ए. 21.

[19] ए. आई. आर. (1995) कलकत्ता 304.

महारम अली बनाम आपेशा खातून[20] इस मामले में पति ने पत्नी को अधिकार दिया था कि यदि वह पत्नी की सहमति के बिना दूसरा विवाह करेगा तो पत्नी फतवीज का प्रयोग करके अपने को तलाक दे देगी पत्नी द्वारा अपने को दिया गया तलाक वैध एवं मान्य है।

हमीदुल्ला बनाम फैजुन्निसा[21] इस मामले में विवाह के पूर्व पति व पत्नी के मध्य यह करार हुआ था कि पति- पत्नी की मांग पर उसे 400/- रूपये मुअज्जल मेहर के रूप में प्रदान करेगा और प्रति वर्ष चार बार पत्नी अपने मायके जाने के लिए स्वतंत्र रहेगी और यदि इन शर्तो में से किसी शर्त का उल्लंघन होता है, तो पत्नी अपने को तलाक दे सकेगी। विवाह के कुछ दिनो के पश्चात् पत्नी ने पति के ऊपर क्रूरता और मुअज्जल मेहर की अदायगी न किये जाने के आरोप लगाकर उसे तलाक दे दिया ऐसा तलाक मान्य है, क्योंकि सभी शर्तें युक्तिसंगत थी और ये मुस्लिम विधि की नीतियों के विरूद्ध नहीं थी।

फजल मुहम्मद बनाम उम्मातुर रहीम[22] इस वाद में सिन्ध के मुख्य न्यायालय ने यह धारण किया कि मुसलमानों पर प्रयोज्य सामान्य विधि को रद्द करना अधिनियम का आशय नहीं था। और यह नहीं कहा जा सकता कि पति ने अपनी पत्नी के भरण- पोषण का प्रबन्ध करने में उपेक्षा की या उसमें वह असफल रहा जब तक कि पति पर सामान्य मुस्लिम विधि के अन्तर्गत पत्नी के भरण- पोषण का दायित्व न हो। विवाह- विच्छेद के लिए पत्नी का वाद खारिज कर दिया गया, क्योंकि यह पाया गया कि वह अपने पति के प्रति वफादार और आज्ञाकारिणी नहीं थी।

मुस्लिम विधि के अन्तर्गत पति- पत्नी के भरण- पोषण के लिए तभी दायित्वाधीन है जबकि पत्नी अपने दाम्पत्य कर्तव्यों का पालन कर रही हो इसलिए यदि पत्नी किसी युक्तियुक्त कारण से पति से अलग रह रही हो तो वह पति की भरण- पोषण में असफलता के आधार पर विवाह- विच्छेद की डिक्री नहीं प्राप्त करती, क्योंकि वह अपने व्यवहार से ही मुस्लिम विधि के अन्तर्गत भरण- पोषण की अधिकारिणी नहीं रह जाती है।

मो० नूर बीबी बनाम पीर वक्स[23] इस वाद में यह निर्णीत हुआ कि यदि पति वाद दायर करने के दो वर्ष तुरन्त पूर्व की अवधि तक पत्नी को भरण- पोषण प्रदान करने में असफल रहता है तो पत्नी इस अधिनियम की धारा- 2 (ii) के अन्तर्गत विवाह- विच्छेद के लिए हकदार है। यद्यपि पति के साथ रहने से इन्कार के अपने व्यवहार के कारण वह उस अवधि के लिए भरण- पोषण के दावे को क्रियान्वित नहीं कर सकती जिस अवधि में पति उसे भरण- पोषण देने में असफल रहा है।

इतवारी बनाम मुसम्मात असगरी[24] इस वाद में पति ने पहली पत्नी के विरूद्ध दाम्पत्य अधिकारों के पुनर्स्थापन का वाद दायर किया था। इस पत्नी ने पति द्वारा दूसरी पत्नी लाने और निर्दयता के आधार पर अपने माता- पिता के साथ रहने का औचित्य दिखाया। मुन्सिफ ने पत्नी द्वारा निर्दयता के सबूत न दे सकने के कारण पति का वाद डिक्री कर दिया। पत्नी द्वारा जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील करने पर मुन्सिफ का निर्णय उलट दिया गया। पति द्वारा उच्च न्यायालय में अपील करने पर न्यायमूर्ति एस. एस. धवन ने अपील खारिज करते हुए कहा कि यह दूसरी पत्नी लाने वाले पति को साबित करना चाहिए कि उसके द्वारा दूसरी पत्नी लाना पहली पत्नी का अपमान या निर्दयता नहीं है।

---

[20] (1915) 19 कल. डब्ल्यू. एन. 1226.

[21] (1982) 8 कलकत्ता 327.

[22] ए. आई. आर. 1949 पेशावर 7.

[23] ए. आई. आर. 1950 सिन्ध 8.

[24] ए. आई. आर. 1960 इला. 684.

नूर सबा खातून बनाम मो० कासिम[25] इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया कि एक मुस्लिम तलाकशुदा स्त्री को अपने अवयस्क बच्चों के लिए अपने पति से भरण- पोषण प्राप्तकरने का अधिकार है, जब तक कि वो वयस्क न हो जाये। न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि पत्नी का यह अधिकार मुस्लिम विधि के अन्तर्गत तथा धारा- 125 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत भी सम्पूर्ण है, जब बच्चे तलाकशुदा पत्नी के साथ रह रहे हों।

जोहरा खातून बनाम मोहम्मद इब्राहीम[26] इस वाद में उच्चत्तम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा- 125 के अन्तर्गत न केवल तलाकशुदा पत्नी ही सम्मिलित है बल्कि इसके अन्तर्गत ऐसी पत्नी भी सम्मिलित है जिसने मुस्लिम विवाह- विच्छेद अधिनियम, 1939 के अन्तर्गत विवाह के विघटन की डिक्री प्राप्त कर लिया है। अत: इस अधिनियम के अन्तर्गत विवाह विच्छेद की डिक्री प्राप्त कर लेने के बाद भी पत्नी अपने पूर्व पति से भरण- पोषण प्राप्त कर सकती है। वशर्ते उसने दूसरा विवाह न कर लिया हो।

मोहम्मद अहमद खाँ बनाम शाहबानों बेगम[27] इस मामले में उच्चत्तम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा- 125 सभी धर्मो की महिलों पर लागू होती है अर्थात् धारा- 125 के तहत सभी धर्मो की महिलायें अपने पति से भरण पोषण प्राप्त कर सकती हैं। और इसी मामले के बाद संसद ने मुस्लिम महिला (विवाह- विच्छेद) पर अधिकारों का संरक्षण अधिनियम, 1986 बनाया।

ए.ए. अब्दुल्ला बनाम ए.वी. मोहमुना सैयद भाई[28] इस मामले में गुजरात उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि तलाकशुदा मुस्लिम स्त्री भरण- पोषण प्राप्त करने की हकदार है।

वी.पी. कथेसा उम्मा बनाम नारायन्नाथ कुम्हासा[29] के वाद में उच्चत्तम न्यायालय ने कहा कि हिबा एक जीवित व्यक्ति द्वारा दूसरे जीवित व्यक्ति को बिना प्रतिफल के किया गया सम्पत्ति का अन्तरण है।

मुसम्मात हुसेना बीबी बनाम मुसम्मात जोहरा बाई[30] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि पर्दाशीन स्त्री द्वारा दिया गया उपहार मान्य है।

करीयम बाई बनाम मरियम बाई[31] मद्रास के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि पर्दाशीन स्त्री द्वारा दिया गया दान (हिबा) मान्य होता है।

मोहम्मद यूसुफ बनाम हसीना यूसुफ [32] के वाद मे कहा गया कि जहाँ दान दो व्यक्तियों को संयुक्त रूप से उनके हिस्सों को बिना बताये दिया जाता है वहाँ दाता का सम्पत्ति में हिस्सा सामान्यिक अधिकारी के रूप में समझा जायेगा।

---

[25] (1997) सु. को. 523.

[26] ए. आई. आर. 1984 सु. को. 1243.

[27] ए. आई. आर. 1985 सु. को. 945.

[28] ए. आई. आर. (1985) गुजरात 141.

[29] ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 275.

[30] 1960 एस. पी., प्रिवी कौंसिल द्वारा पर्दाशीन स्त्री द्वारा (हिबा) की शक्ति के बारे में कई वादों में चर्चा की गयी। देखिये तैय्यब जी। पैरा 66, देववृत मुकर्जी न्यायमूर्ति द्वारा दिया गया निर्णय सोनिया परिकिनी बनाम शेख मौला बख्शबख्श, (1956) 2 कलकत्ता 579.

[31] (1960) मद्रास 447.

[32] (1946) 49 बाम्बे लॉ रिपोर्टर 561.

कमरून्निसा बीबी बनाम हुसेनी बीबी[33] के वाद में भू- सम्पत्ति का मौखिक हिबा जिसके बाद कब्जा अन्तरित कर दिया था मान्य समझा गया।

आजीवन हित का दान (हिबा) से सम्बन्धित वाद

मुसम्मात हजारा बाई बनाम मोहम्मद आदमी सईद[34]
जलीला बीबी बनाम शेख इस्माइल[35]
अमजद खाँ बनाम अशरफ खाँ[36]
नवाजिश अली खाँ बनाम अली रजा खाँ[37]

हिन्दू विधि से सम्बन्धित न्यायदृष्टान्त

माया बाई बनाम उत्तमराम[38] के वाद में न्यायालय ने एक यूरोपीय ईसाई की दो हिन्दू रखैलों के अधर्मज पुत्रों का पालन- पोषण हिन्दू की भाँति होने के आधार पर उन्हें हिन्दू माना।

राम परघास सिंह बनाम धानव[39] के वाद में एक हिन्दू नर्तकी ने धर्म परिवर्तन करके मुसलमान धर्म स्वीकार कर लिया। उसकी सन्तान का पालन- पोषण उनके हिन्दू नाना- नानी ने हिन्दू की भाँति किया। न्यायालय ने ऐसी सन्तान को हिन्दू माना।

यदि माता- पिता में से कोई एक हिन्दू है दूसरा बौद्ध, जैन, सिक्ख है फिर भी ऐसे माता पिता से उत्पन्न सन्तान जन्म से हिन्दू मानी जायेगी। आवश्यक यह है कि सन्तान के जन्म के समय माता- पिता को हिन्दू होना चाहिए। यदि बाद में माता- पिता कोई एक या दोनों हिन्दू धर्म का त्याग कर देते हैं फिर भी सन्तान हिन्दू ही रहेगी। जब तक माता या पिता अपने पैतृक अधिकारों का प्रयोग करते हुए उनका धर्म परिवर्तन नहीं कर देते। औरस सन्तान को धर्म परिवर्तन कराने का अधिकार उसके पिता एवं पिता की मृत्यु के बाद माता को होता है। जारज सन्तान को धर्म परिवर्तन कराने का अधिकार माता को होता है। जो व्यक्ति जन्म से हिन्दू तब तक हिन्दू बना रहेगा जब तक वह विधिवत धर्म परिवर्तन करके किसी अन्य धर्म को स्वीकार नहीं कर लेता है। धर्म में आस्था न रखने, नास्तिक होने या हिन्दू धर्म की आलोचना करने पर भी जन्म से हिन्दू रहेगा।

पेरूमल बनाम पुन्नूस्वामी के मामले में कहा गया कि वे व्यक्ति भी हिन्दू माने जाते हैं जिन्होने अपना धर्म परिवर्तन कर हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया है या जो पहले हिन्दू थे परन्तु बाद में किसी दूसरे धर्म में चले गये थे लेकिन अब फिर हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया है।

राम परगास बनाम मुसम्मात दहन बीबी[40] के वाद में नायक जाति की एक नर्तकी मुसलमान हो गई। उसके पुत्रगण अपने नाना- नानी के पास रहे और उनका पालन- पोषण बतौर हिन्दू हुआ, न्यायालय ने ऐसे पुत्रों को हिन्दू माना।

---

[33] (1880) 3 इला. 266 (पी. सी.)

[34] ए. आई. आर. 1977 मद्रास 374.

[35] ए. आई. आर. 1979 मद्रास 193.

[36] (1929) पी. सी., रसूल बीबी बनाम युसूफ, ए. आई. आर. 1933 बाम्बे 324.

[37] (1948) पी. सी. 134.

[38] (1861) 8

[39] (19442) 3 पटना 152.

विपिन अशोक हुर्रा बनाम रूपा जावरी के मामले मे उच्चत्तम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पारस्परिक सहमति से विवाह- विच्छेद की याचिका में पक्षकारों के बीच पारस्परिक डिक्री पारित करने के समय तक होनी चाहिए। पक्षकारों को इसके लिए 6 माह से 18 महीने की अवधि प्राप्त है।

मनोहर जोशी बनाम एन.बी. पाटिल[41] के मामले में स्पष्ट किया है कि उच्चत्तम न्यायालय के अनुसार हिन्दुत्व से सदैव हिन्दू धर्म का बोध नहीं होता है।

यज्ञ पुरूष दास जी बनाम मूलदास[42] के मामले में उच्चत्तम न्यायालय ने कहा कि हिन्दू शब्द अत्यन्त व्यापक अर्थ में प्रयुक्त होता है, और उन सभी व्यक्तियों को हिन्दू कहा जाऐगा जो अपने को हिन्दू कहते हैं तथा हिन्दू धर्म और संस्कृति के अनुसार आचरण करतें हैं।

अब्राहम बनाम अब्राहम के वाद में उच्चत्तम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि हिन्दू जन्म से होता है तथा बनाया भी जाता है जो हिन्दू धर्म को ग्रहण कर लेता है।

पेरूमल बनाम पुन्नूस्वामी[43] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि कोई भी व्यक्ति अपनी स्पष्ट या विवक्षित घोषणा करके यदि किसी विशेष हिन्दू सम्प्रदाय के आचरण का पालन करता है और उस सम्प्रदाय या जाति के लोग हिन्दू स्वीकार कर लिए जाते हैं तो वह हिन्दू मान लिया जायेगा।

मोहनदास बनाम देवसोम बोर्ड[44] के मामले में न्यायालय ने कहा कि जब कोई व्यक्ति यह घोषणा करता है कि वह हिन्दू धर्म का समर्थक है तो वह हिन्दू है लेकिन ऐसी घोषणा सद्विचार से किया गया होना चाहिऐ।

सुरेश खुल्लर बनाम विजय खुल्लर[45] के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय ने धारित किया कि अपील लम्बित रहने के दौरान दूसरा विवाह किये जाने पर दूसरा विवाह शून्य होता है क्योंकि अपील स्वीकृत होते ही पहला विवाह अस्तित्व में आ जाता है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मुस्लिम विधि मुसलमानों पर लागू होती है जबकि हिन्दू विधि हिन्दुओं पर लागू होती है। मुस्लिम विधि का प्रारम्भ 622 ई. से प्रारम्भ होता है इससे पूर्व मुसलमानों के लिए कोई विधि नहीं थी। मुस्लिम विधि के अस्तित्व में आने पर मुस्लिम अपनी स्वीय विधि से शासित होते हैं, और हिन्दू विधि का प्रारम्भ रूढि और प्रथाओं से होता है इसलिए हिन्दू भी अपनी स्वीय विधि से शासित होतें हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संविधान में यह प्रावधान किया गया है कि एक समान सिविल संहिता होगी लेकिन संसद अभी तक हिन्दू और मुसलमान व अन्य धर्मो के लिए एक समान कानून बनाने में असफल रही है इसलिए मुसलमान अपनी स्वीय विधि से शासित होते हैं और हिन्दू भी अपनी स्वीय विधि से शासित होते हैं, लेकिन सभी धर्मो के लिए एक समान कानून बनाने में संसद को अभी बहुत समय लगेगा जब तक मुसलमान मुस्लिम विधि से और हिन्दू, हिन्दू विधि से शासित होते रहेगें। अलग- अलग धर्मो के लिए अलग- अलग कानून होने से न्यायालय में न्याय मिलने में काफी परेशानी होती है और न्याय विफल होता है। इसलिए संसद को इस सम्बन्ध

---

40 ए. आई. आर. 1924 पटना

41 ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 796.

42 ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1119.

43 1917 एस. सी. 2352.

44 1975 के. एल. टी. 55.

45 (2002) 2 एच. एल. आर. 727 (दिल्ली)

में एक समान कानून बनाना चाहिऐ जिससे सभी धर्मो को एक समान न्याय मिल सके इसके सम्बन्ध में सरकार को प्रयास करना चाहिए।

जब कोई व्यक्ति अपराध करता है, चाहे वह किसी भी धर्म का हो तब उस पर भारतीय दण्ड संहिता व संसद और विधानमण्डल द्वारा बनाये गऐ कानून ही लागू होतें हैं। चाहे वह व्यक्ति किसी भी धर्म का हो। जब अपराध होने पर अन्य विधि सभी धर्मो पर समान रूप से लागू होती है तो फिर हिन्दू और मुस्लिम अपनी स्वीय विधि से शासित क्यों होतें हैं संसद को हिन्दू और मुसलमानों के लिए कोई ऐसी विधि बनानी चाहिऐ जिससे हिन्दू और मुसलमान भी उसी विधि से शासित हों।